अपायिनः =जाना; **अनित्याः** =क्षणभंगुर; **तान्** =उनको; **तितिक्षस्व** =सहन करने का प्रयत्न कर; **भारत** =हे भरतवंशी अर्जुन।

अनुवाद

हे कुन्तीनन्दन! इन्द्रिय और विषयों के संयोग से होने वाली सुख-दुःख की प्राप्ति सर्दी-गर्मी के आने जाने के समान ही अनित्य और क्षणभंगुर है। इसलिए हे अर्जुन! उनको विचलित हुए बिना सहने का अभ्यास कर।।१४।।

तात्पर्य

स्वधर्म का भलीभाँति पालन करने के लिए सुख-दुःख आदि अनित्य और क्षणभंगुर द्वन्द्वों को सहन करने का अभ्यास करना आवश्यक है। वैदिक विधान के अनुसार, माघ मास में भी प्रातःकाल स्नान करना अनिवार्य है। उस समय अति शीत रहती है; किन्तु धर्मपरायण व्यक्ति स्नान करने में संकोच नहीं करता। गृहिणी ग्रीष्म ऋतु में भी निस्संकोच भोजन बनाती है। इस प्रकार जलवायु सम्बन्धी असुविधा की उपेक्षा करते हुए स्वधर्माचरण करना अनिवार्य है। इसी भाँति, युद्ध करना क्षत्रियों का स्वधर्म है, चाहे मित्रों अथवा स्वजनों से ही क्यों न लड़ना पड़े। किसी भी परिस्थिति में स्वधर्म से विमुख होना उचित नहीं हो सकता। ज्ञान-प्राप्ति के लिए धार्मिक विधि-विधान का पालन अवश्य करना होगा, क्योंकि ज्ञान एवं भक्ति के द्वारा ही माया-मुक्ति साध्य है।

अर्जुन के लिए प्रयुक्त दोनों सम्बोधन महत्त्वपूर्ण हैं। **कौन्तेय** एवं **भारत** सम्बोधन क्रमशः उसके मातृकुल तथा पितृकुल की महिमा के द्योतक हैं। दोनों ही पक्षों की दृष्टि से उनकी वंश परम्परा महान् है। महान् परम्परा का तात्पर्य है कर्तव्य को भली प्रकार से पूर्ण करने का गुरुतर उत्तरदायित्व। अतएव अर्जुन युद्ध से पराङ्मुख नहीं हो सकता।

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।
31.1
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते।।१५।।

यम् =जिसको; **हि** =निश्चित रूप से; **न व्यथयन्ति** =व्याकुल नहीं कर सकते, **एते** =ये सब; **पुरुषम्** =व्यक्ति को; **पुरुषर्षभ** =हे नरश्रेष्ठ; **सम** =निर्विकार रहने वाला; **दुःख** =दुःख; **सुखम्** =सुख में; **धीरम्** =धीर; **सः** =वह; **अमृतत्वाय** =मुक्ति के; **कल्पते** =योग्य है।

अनुवाद

हे पुरुषश्रेष्ठ अर्जुन! जो सुख-दुःख को समान समझकर इन दोनों से व्याकुल नहीं होता, वह धीर पुरुष निश्चित रूप से मुक्ति के योग्य है।।१५।।

तात्पर्य

जो व्यक्ति परतत्त्व-साक्षात्कार के दृढ़संकल्प से युक्त है तथा सुख-दुःख के आक्रमण को समभाव से सह सकता है, वह निस्सन्देह मुक्ति के योग्य है।